दैनिक जागरण

कुछ फैसले इतिहास बदलकर नए भविष्य की बुनियाद रखते हैं

समाज सुधार का बड़ा काम

तत्काल तीन तलाक संबंधी विधेयक पर राज्यसभा की मुहर लगना समाज सुधार की दिशा में एक बड़ी पहल है। अच्छा होता कि विपक्ष इस विधेयक के विरोध पर नहीं अड़ता और मुस्लिम समाज को यह संदेश देने में भागीदार बनता कि इस कुप्रथा को खत्म करने का समय आ गया है। क्या इससे अजीब बात और कोई हो सकती है कि कई विपक्षी दलों ने मुस्लिम समाज के उन नेताओं के साथ खड़े होना पंसद किया जो यह तर्क दे रहे थे कि तत्काल तीन तलाक की प्रथा गलत तो है, लेकिन उसे खत्म करने की पहल नहीं होनी चाहिए? तत्काल तीन तलाक की कुप्रथा उन सामाजिक बुराइयों में से है जो महिलाओं को दोयम दर्जे का नागरिक साबित करती है। क्या ऐसी कोई प्रथा धर्मसम्मत कही जा सकती है जो पति को पत्नी को एक झटके में छोड़ने का अधिकार देती हो? तत्काल तीन तलाक की बुराई के चलन में होने के कारण मुस्लिम महिलाएं अपने वैवाहिक भविष्य को लेकर आशंका से घिरी रहती थीं। इससे भी खराब बात यह थी कि जब उन्हें एक झटके में तीन तलाक दे दिया जाता था तो वे एक तरह से सड़क पर आ जाती थीं। इस हालत में उन्हें मुश्किल से ही कोई मदद मिलती थी।

यह दुर्भाग्यपूर्ण रहा कि मुस्लिम नेताओं और धर्मगुरुओं ने अपने समाज की महिलाओं के साथ खड़े होने के बजाय तत्काल तीन तलाक का समर्थन करना बेहतर समझा। इस रवैये को देखते हुए यह आवश्यक हो गया था कि तत्काल तीन तलाक को दंडनीय अपराध बनाया जाए। इसकी जरूरत इसलिए और बढ़ गई थी, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट की ओर से तत्काल तीन तलाक को अमान्य करार दिए जाने के बाद भी इस तरह के तलाक का सिलसिला कायम था। यह एक तरह से सुप्रीम कोर्ट को दी जाने वाली सीधी चुनौती ही थी। एक झटके में तीन तलाक को दंडनीय अपराध बनाने के खिलाफ तरह-तरह के तर्क देने वाले जानबूझकर इसकी अनदेखी ही कर रहे थे कि दहेज की मांग करना भी दंडनीय अपराध है। जब समाज सामाजिक बुराइयों को खत्म करने में सहयोग देने से इन्कार करे तब फिर कानूनी उपायों का सहारा लेना जरूरी हो जाता है। यह उम्मीद की जाती है कि मुस्लिम महिला विवाह अधिकार संरक्षण विधेयक के कानून बन जाने के बाद तत्काल तीन तलाक के मामले थमेंगे। ऐसा हो, इसके लिए मुस्लिम युवाओं को आगे आना चाहिए, क्योंकि कोई समाज तभी आगे बढ़ता है जब उसकी महिलाओं को मान-सम्मान मिलता है। अब जब मुस्लिम महिलाएं भी अधिकार संपन्न होने जा रही हैं तब फिर यह जरूरी हो जाता है कि समान नागरिक संहिता की दिशा में आगे बढ़ा जाए।

कोशिशों का दिखता असर

जल संरक्षण की दिशा में झारखंड में हो रही छोटी-छोटी कोशिशें अब अपना असर दिखा रही हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने मन की बात कार्यक्रम में एक महीने के भीतर जहां दो बार झारखंड के अलग-अलग इलाकों में हो रहे इन प्रयासों की सराहना कर यहां के गांवों को राष्ट्रीय फलक पर चर्चा में लाया, वहीं समय समय पर यहां ग्रामीण स्तर पर हो रहे प्रयास भी लोगों को जल संरक्षण की प्रेरणा देते रहे हैं। इस दिशा में दैनिक जागरण ने शहर से लेकर गांव तक पूरे राज्य में लोगों को पानी का महत्व बताते हुए जल संरक्षण के लिए प्रेरित करना का बीड़ा उठाया तो इस नेक काम को झारखंड सरकार का भी साथ मिला। इसके तहत पूरे प्रदेश में स्कूल-कॉलेजों के स्तर पर जलसैनिकों की एक बड़ी फौज तैयार हो रही है। अभियान के पहले ही चरण में लगभग डेढ़ लाख जागरण जलसैनिक बूंद-बूंद पानी का संचय करने के संकल्प को ले अपने काम में जुट गए हैं। जल संरक्षण और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में इन जल सैनिकों द्वारा रोज किए जा रहे काम अन्य लोगों को भी पानी का मोल बताते हुए प्रकृति संरक्षण के लिए प्रेरित कर रहे हैं। जल, जंगल और जमीन झारखंड की पहचान से जुड़े तत्व हैं, लेकिन इसके बावजूद प्रकृति की गोद में बसे इस राज्य के कई इलाके गंभीर जल संकट से जूझते हैं। वहीं कई इलाकों में लगातार जल संकट गहराता जा रहा है। खुशी की बात ये है कि गांवों और पंचायतों के स्तर पर जमीन से जुड़े लोगों और किसानों ने अपने-अपने स्तर से समय समय पर जल संरक्षण का प्रयास कर अपने-अपने इलाकों की सूरत बदल डाली। यहां के सिमोन उरांव, जमुना टुडू और चामी मुर्मू जैसी शख्सियतें पहले भी पानी और पर्यावरण बचाने को लेकर राष्ट्रीय स्तर पर सराही गई हैं। रांची जिले के ओरमांझी प्रखंड के आरा कैरम गांव से लेकर हजारीबाग जिले के कटकमसांडी प्रखंड के लुपुंग आदि गांव भी पिछले दिनों अपने इन्हीं संकल्पों के बूते पूरे देश में चर्चा में आए। इन इलाकों में हुए काम से प्रेरणा लेकर अन्य इलाकों को भी इस तरह के प्रयास करने चाहिए। जल संरक्षण के प्रति फैल रही यह जागरूकता भविष्य के लिए सुखद संकेत दे रही है।

> जल, जंगल और जमीन झारखंड की पहचान से जुड़े तत्व हैं, लेकिन इसके बावजूद इस राज्य के कई इलाके गंभीर जल संकट से जूझ रहे हैं

कर्नाटक ने दिखाया राजनीति का खराब चेहरा

ए. सूर्यप्रकाश

कर्नाटक में नई सरकार की नियति अब अदालती फैसले से तय होगी। तब तक अस्थिरता का दौर जारी रहेगा और लोग भी असहाय होकर एक और सरकार को लड़खड़ाते हुए देखने पर मजबूर होंगे

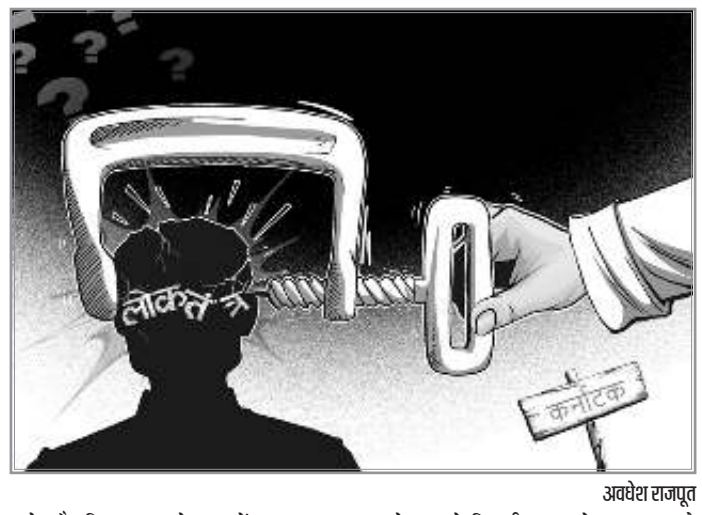

अवधेश राजपूत

एचडी कुमारस्वामी सरकार के पतन के साथ ही कर्नाटक के राजनीतिक नाटक से पर्दा उठ गया। राजनीति का विद्रूप चेहरा दिखाने वाला यह नाटक कई दिनों तक खिंचा। अब राज्य में बीएस येदियुरप्पा के नेतृत्व में बनी सरकार ने बहुमत भी हासिल कर लिया है। हालांकि इसके साथ ही कहानी पूरी तरह खत्म नहीं हुई है, क्योंकि इसमें कर्नाटक विधानसभा के स्पीकर रहे केआर रमेश कुमार के फैसलों को लेकर भी कई संवैधानिक पेंच फंसे हुए हैं। स्पीकर रहते हुए कुमार ने उन 17 विधायकों को अयोग्य करार दिया जो पहले ही उन्हें अपने इस्तीफे भेज चुके थे। विधायक चाहते थे कि उनके इस्तीफे स्वीकार किए जाएं और उनमें से दस विधायकों ने तो स्पीकर से मुलाकात कर इस्तीफा देने के अपने अधिकार पर चर्चा भी की थी। वहीं कांग्रेस और जद-एस उन्हें अयोग्य ठहराना चाहते थे, क्योंकि वे विधानसभा में तब सदन में मौजूद नहीं रहे जब कुमारस्वामी सरकार विश्वासमत का सामना कर रही थी। स्पीकर ने यह फैसला भी सुनाया कि मौजूदा विधानसभा के कार्यकाल में वे चुनाव भी नहीं लड़ सकते। इससे इन विधायकों की सभी योजनाएं धरी की धरी रह जाएंगी। साथ ही नए मुख्यमंत्री की उस योजना को भी झटका लगेगा जिसमें वे उपचुनावों में इन विधायकों को भाजपा के टिकट पर मैदान में उतारने की सोच रहे होंगे। यह मामला पहले से ही सुप्रीम कोर्ट में लंबित है और पूरी संभावना है कि ये विधायक स्पीकर द्वारा उन्हें अयोग्य ठहराने के फैसले को भी अदालत में चुनौती देंगे। भले ही इसका जो परिणाम निकले, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि इस घटनाक्रम से देश की लोकतांत्रिक परंपराओं को खासी ठेस पहुंची है।

इस नाटक की शुरुआत तब हुई जब बागी विधायक इस्तीफे सौंपने स्पीकर के कार्यालय गए। चूंकि इस्तीफे उनकी अनुपस्थिति में दिए गए थे तो स्पीकर ने कहा कि विधायक उनसे खुद आकर मिलें, क्योंकि वह इस दायित्व से बंधे हैं कि यह पड़ताल कर पाएं कि क्या वे किसी दबाव या अंतरात्मा की आवाज पर ही इस्तीफा दे रहे हैं? विधानसभा नियमों के अनुसार यदि विधायक स्पीकर से मिलकर अपना इस्तीफा सौंपकर यह भरोसा दिलाएं कि वे अपनी मर्जी से ऐसा कर रहे हैं तब ऐसी स्थिति में स्पीकर को तत्काल प्रभाव से उनका इस्तीफा स्वीकार करना होगा। यदि इस्तीफा खुद नहीं सौंपा जाता तब नियम स्पीकर को यह गुंजाइश देते हैं कि वह इसकी तफ्तीश शुरू करें कि क्या इस्तीफा स्वैच्छिक और वास्तविक है? उनके पास ऐसे पत्र को खारिज करने का भी पूरा अधिकार है। जब सुप्रीम कोर्ट ने निर्देश दिया तो दस विधायक उनसे मिलने भी गए। इस प्रक्रिया का पालन करते हुए उन्होंने स्पीकर को सूचित किया कि वे इस्तीफा देना चाहते हैं।

जब कुमारस्वामी सरकार को विश्वासमत की बाधा पार करनी थी तब सत्तारूढ़ गठबंधन की दोनों पार्टियों ने अपने सदस्यों को सदन में रहने और विश्वासमत के पक्ष में मतदान का व्हिप जारी किया। इस्तीफा देने वाले विधायक मुंबई में डेरा डाले रहे। इस पूरे घटनाक्रम और इस्तीफे से जुड़े हुए नियमों को देखते हुए स्पीकर को विधायकों के इस्तीफे स्वीकार कर लेने चाहिए थे। चूंकि विधायकों ने विश्वासमत से पहले ही इस्तीफे दे दिए तो उनकी दलील थी कि पार्टियों के व्हिप उन पर लागू नहीं होते।

राज्य में पखवाड़े भर चला ड्रामा बड़ा डरावना था जिसमें कांग्रेस और जद-एस ने बागियों को वापस अपने पाले में लाने के लिए हर तिकड़म आजमाई। यहां तक कि विधायकों को मुंबई में पुलिस शिकायत दर्ज करानी पड़ी। कर्नाटक कांग्रेस के कद्दावर नेता डीके शिवकुमार ने उस होटल में घुसने की नाकाम कोशिश भी की जहां बागी विधायक रुके हुए थे। सदस्यों के इस्तीफों को लेकर कर्नाटक विधानसभा के स्पीकर का रवैया राज्यसभा के सभापति एम वेंकैया नायडू के दृष्टिकोण से उलट रहा। नायडू को सपा के राज्यसभा सांसद नीरज शेखर का त्यागपत्र 15 जुलाई को मिला। उसके अगले दिन ही नायडू ने राज्यसभा को सूचित किया कि उन्होंने शेखर का इस्तीफा स्वीकार कर लिया है। सभापति ने उन्हें बुलाकर पूछा कि क्या वह वास्तव में इस्तीफा देना चाहते हैं और ऐसा वह स्वेच्छा से कर रहे हैं। उन्होंने उनसे पूछा कि क्या वह अपने निर्णय पर पुनर्विचार करना चाहेंगे। फिर जब सदस्य इस्तीफे पर अड़े रहे तो सभापति ने उसे तत्काल प्रभाव से स्वीकार करते हुए अपने सचिवालय को शेष औपचारिकताएं शीघ्र संपन्न करने का निर्देश दिया। इस्तीफे की औपचारिक घोषणा भी उन्होंने सदन में 16 जुलाई को कर दी।

वापस कर्नाटक विधानसभा में हुए नाटक की ओर लौटते हैं। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण था कि राज्य की जनता ने 2018 में हुए विधानसभा चुनाव में किसी भी दल या चुनावपूर्व गठबंधन को स्पष्ट जनादेश नहीं दिया। अंतिम परिणामों में भाजपा 104 सीटों के साथ बहुमत के जादुई आंकड़े से चंद कदम दूर रह गई। राज्य में सबसे कम 37 सीटें हासिल करने वाली जद-एस को राज्य की दूसरी सबसे बड़ी पार्टी के 78 विधायकों की मदद से मुख्यमंत्री की कुर्सी मिल गई। इससे पहले 2008 के विधानसभा चुनाव में भी भाजपा 224 सदस्यीय विधानसभा में 110 सीटें जीत पाई थी। तब येदियुरप्पा ने कुछ निर्दलीय विधायकों को मिलाकर सरकार बना ली और बाद में उसका तोड़ निकाला।

91वें संविधान संशोधन के बाद दलबदल के लिए विधायक जुटाना आसान नहीं रहा। ऐसे में यदि कोई पार्टी बहुमत से मामूली रूप से पीछे रह जाए तो केवल यही विकल्प बचता है कि वह विपक्षी खेमे के कुछ विधायकों को तोड़कर उनकी सीट खाली कराए और उन्हें अपने टिकट पर उपचुनाव लड़ाए। येदियुरप्पा ने 2008 में ऐसे ही अपना आंकड़ा बढ़ा लिया था। यह मतदाताओं की परिपक्वता भी दर्शाता है कि जिन लोगों ने पहले कभी भाजपा वोट नहीं दिया उन्होंने भी सरकार को स्थायित्व देने के लिए इस पार्टी के प्रत्याशियों को जिताया। इस पूरे अभियान को 'ऑपरेशन कमल' नाम दिया गया था जिसकी काफी आलोचना भी हुई थी। हालांकि मेरा मानना है कि विधानसभा को भंग करने और नए चुनाव कराने से यह कहीं बेहतर है कि कुछ विधायक दूसरी पार्टी के टिकट पर ही नया जनादेश हासिल करने की जुगत करें। यह दलबदल के शर्मनाक खेल से बेहतर है, जो दलबदल कानून लागू होने से पहले अक्सर देखने को मिलता था।

बागी विधायकों को भाजपा के टिकट पर चुनाव लड़ाकर येदियुरप्पा फिर वही कवायद दोहराने की योजना बना रहे थे, मगर स्पीकर के आदेश ने इस योजना को पलीता लगा दिया। अब हमें अदालती फैसले का इंतजार करना होगा। तब तक अस्थिरता का दौर जारी रहेगा और लोग भी असहाय होकर एक और सरकार को लड़खड़ाते हुए देखने पर मजबूर होंगे।

(लेखक प्रसार भारती के चेयरमैन एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

पतंगबाजी सरीखी चिट्ठीबाजी

राजीव सचान

यदि बुद्धिजीवी तबका आपस में संवाद नहीं कर सकता तो कितनी ही चिट्ठियां लिख ले, समाज को सही दिशा नहीं दिखा सकता

चिट्ठियों का अपना महत्व है, लेकिन हर चिट्ठी असरकारी नहीं होती। अगर होती तो लोकसभा चुनाव के मौके पर लिखी गई लेखकों के एक समूह की वह चिट्ठी अवश्य रंग लाती जिसमें घुमा फिराकर यह कहा गया था कि लोकतंत्र को बचाने के लिए भाजपा को वोट देने से बचा जाना चाहिए। असहिष्णुता, भीड़ की हिंसा और जय श्रीराम नारे के कथित दुरुपयोग का जिक्र करते हुए 49 बुद्धिजीवियों की ओर से प्रधानमंत्री को जो चिट्ठी लिखी गई वह सार्वजनिक होते ही आलोचना और निंदा की चपेट में आ गई तो इसीलिए, क्योंकि एक तो चिट्ठी लिखने वालों में से कई भाजपा विरोधी की छवि से लैस हैं और दूसरे उन्होंने इस पर बल देना ज्यादा जरूरी समझा कि केवल अल्पसंख्यक और दलित ही भीड़ की हिंसा यानी मॉब लिंचिंग का शिकार हो रहे हैं। ऐसा करके उन्होंने वही काम किया जो मीडिया का एक हिस्सा और कुछ विचारक बड़ी चतुराई से करने में लगे हुए हैं। यह काम है चुनिंदा तथ्यों को अपने हिसाब से उठाना और फिर उनकी मनचाही व्याख्या करना। ऐसा करते हुए तथ्यों को तोड़ने-मरोड़ने का भी काम किया जाता है। इसे फैक्ट लिंचिंग कहना अनुचित न होगा। इसका एक उदाहरण पेश करती वह खबर देखें जिसका शीर्षक है- दो सालों में 2400 छात्रों ने आइआइटी की पढ़ाई छोड़ी, आधे एससी-एसटी ओबीसी के। पहली नजर में यही लगेगा कि इन वर्गों के छात्रों के लिए आइआइटी की पढ़ाई पूरी करना मुश्किल हो रहा है, लेकिन जब आप खबर की तह तक जाते हैं तो पाते हैं कि पढ़ाई पूरी न करने वाले आधे, बल्कि आधे से कुछ अधिक छात्र सामान्य वर्ग के हैं।

फैक्ट लिंचिंग का काम किस सुनियोजित तरीके से हो रहा है, इसका एक और उदाहरण देखें। बीते हफ्ते दिल्ली में एक युवक ने सरेराह एक युवती की हत्या कर दी। एक खबर इस शीर्षक से छपी-युवती के पीछे पड़े शख्स ने उसे चाकू घोंपकर मारा। इस खबर में न तो मारी गई युवती का नाम था और न ही उसके किसी परिजन का। अन्य स्रोतों से पता चला कि मारी गई युवती हिंदू थी और उसे मारने वाला मुस्लिम। इसी दिन अहमदाबाद की एक खबर इस शीर्षक से छपी-आदिवासी लड़की से अफेयर के चलते 18 साल के मुस्लिम की पीटकर हत्या। ये दोनों घटनाएं भीड़ की हिंसा या नफरत से उपजी हिंसा का मामला नहीं कही जा सकतीं, लेकिन यह स्वाभाविक है कि दूसरी खबर पढ़कर पाठक यही सोचेंगे कि कहीं यह भीड़ की हिंसा का मामला यानी मॉब लिंचिंग तो नहीं? तथ्यों के साथ इसी तरह के खिलवाड़ ने यह माहौल बनाने में मदद की है कि भारत में अल्पसंख्यकों की जान की खैर नहीं, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि भीड़ की हिंसा जनित घटनाएं नहीं हो रही हैं। सच्चाई यही है कि वे हो रही हैं। पशुओं, बच्चों, वाहनों आदि की चोरी के आरोप में पकड़े गए लोग अक्सर भीड़ की हिंसा का शिकार हो रहे हैं। इसी तरह गाय काटने या गोमांस बेचने के शक के घेरे में आए लोग भीड़ की हिंसा के शिकार हो रहे हैं। इस सबके साथ यदा-कदा सांप्रदायिक वैमनस्य के कारण भी ऐसी घटनाएं हो रही हैं। इसे किसी और न सही, खुद को बुद्धिजीवी कहने वाले लोगों को अवश्य समझना चाहिए। उन्हें यह भी समझना चाहिए कि भीड़ की हिंसा के मामले लचर कानून एवं व्यवस्था का भी नतीजा हैं। आमतौर पर पुलिस पशुओं की चोरी, गायों की तस्करी आदि की घटनाओं को गंभीरता से नहीं लेती। इससे लोगों में आक्रोश बढ़ता है और नतीजा यह होता है कि जब कोई चोर हाथ लगता है तो फिर उसकी पिटाई होती है। कई बार यह पिटाई जानलेवा साबित होती है, लेकिन 49 बुद्धिजीवियों समेत अन्य अनेक बुद्धिजीवी इस निष्कर्ष पर पहुंच गए कि दलित और अल्पसंख्यक चुन-चुनकर भीड़ की हिंसा का शिकार हो रहे हैं।

49 बुद्धिजीवियों की मांग है कि भीड़ की हिंसा से निपटने के लिए कानून बने। सुप्रीम कोर्ट भी ऐसी जरूरत जता चुका है। मोदी सरकार इस दिशा में प्रयासरत भी है, लेकिन क्या कानून बनने मात्र से भीड़ की हिंसा रुक जाएगी? ऐसा होने में संदेह है, क्योंकि पुलिस सुधारों पर ध्यान देने से बचा जा रहा है। इस मामले में भाजपा और गैर भाजपा सरकारों में कोई भेद करना मुश्किल है। इस पर हैरत नहीं कि 49 लोगों की चिट्ठी के जवाब में 62 लोगों की चिट्ठी आ गई। एक समय था जब एक ही पक्ष के लोग चिट्ठी लिखते थे और उसी को प्रचार एवं महत्व मिलता था। तब उन्हें कोई जवाबी चिट्ठी नहीं लिखता था, बल्कि यह कहें तो बेहतर कि लिखने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था। अब वह दौर बीत गया है। अब हर चिट्ठी का जवाब देने वाले हैं। फिल्मकारों, कलाकारों, लेखकों आदि यानी हर समूह के लोगों की किसी भी चिट्ठी पर उन्हीं के बीच का कोई दूसरा समूह उन्हें जवाबी चिट्ठी लिख देता है। यह एक नया परिदृश्य है और शायद यह उन बुद्धिजीवियों को बिल्कुल भी नहीं पच रहा जिन्हें पहले कोई जवाबी चिट्ठी नहीं मिलती थी। उन्हें यह शिकायत रहती है कि उन्हें तत्काल देशद्रोही करार दिया जाता है या फिर पाकिस्तान जाने को कह दिया जाता है। ये बुद्धिजीवी यह भूल जाते हैं कि एक समय वह भी था जब किस तरह कुछ लोगों को बड़ी आसानी से सीआइए एजेंट कह दिया जाता था और फिर भी यह शिकायत कोई नहीं करता था कि देश में असहिष्णुता बढ़ रही है।

बात-बात पर चिट्ठी लिखने वाले यह समझें तो बेहतर कि देश न सही, वक्त बदल गया है और उनकी हर चिट्ठी पर जवाबी चिट्ठी आएगी। यह बात और है कि इससे समाज और देश को कुछ हासिल होने वाला नहीं है। हासिल तो तब होगा जब दोनों खेमों के बुद्धिजीवी एक-दूसरे के साथ संवाद करेंगे। बुद्धिजीवी का मतलब है विद्वान और विद्वान जब संवाद करते हैं तो अपना तर्क रखने के पहले दूसरे के दृष्टिकोण को समझते हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसा कुछ भी नहीं हो रहा और इसीलिए यह जो चिट्ठीबाजी हो रही है उसकी अहमियत पतंगबाजी से ज्यादा नहीं। यदि बुद्धिजीवी तबका आपस में संवाद नहीं कर सकता तो फिर कितनी ही चिट्ठियां लिख ले, समाज को सही दिशा नहीं दिखा सकता।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडीटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन एक संगीत

संगीत शब्द के उच्चारण के साथ ही मन-मयूर नाच उठता है, दिल की धड़कनें तेज हो जाती हैं और मन-प्राण में उमंग और उत्साह की अविरल धारा प्रवाहित हो उठती है। आशय यही है कि संगीत प्रतीक है जीवन का, संगीत प्रतीक है आत्मा का, संगीत प्रतीक है अनुभूति की। महान कवि खलील जिब्रान ने एक बार कहा था, 'संगीत आत्मा की जुबान होती है। जहां पर हमारी जुबान बंद हो जाती है, वहीं संगीत का प्रारंभ होता है।' यदि गंभीरता से मनन करें तो आत्मा-मीमांसा का एक प्रश्न उठ खड़ा होता है कि आधुनिक जीवन की आपाधापी में जबकि हम अपनी आंखें मूंदकर अपने सपनों की दुनिया को साकार करने की होड़ में लगे हुए हैं तो क्या हम संगीत के सच्चे स्वरूप का अहसास कर पाते हैं?

ब्रिटेन के मशहूर कवि पर्सी बिश शेली का यह मानना था कि हमारे जीवन के सबसे मधुर गीत प्रायः वे गीत होते हैं जो हमारे सबसे पीड़ादायक विचारों से उत्पन्न होते हैं। अर्थात संगीत दर्द में जन्म लेता है और यही कारण है कि संगीत के जादुई असर को महसूस करने के लिए दर्द की मौजूदगी बहुत जरूरी है, क्योंकि जब मन प्रसन्न रहता है तो मन के भाव के सूत्र एकत्रित नहीं हो पाते हैं। यदि जीवन में दर्द हो तो दिल में संगीत की उर्मियां स्वतः करवटें लेने लगती हैं। कष्ट और वेदना में कवि बनने की प्रतिभा का आविर्भाव हो जाता है।

कविवर सुमित्रानंदन पंत ने कहा था, 'वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान, चुपचाप उमड़कर आंखों से वही होगी कविता अनजान।' दर्द के अभाव में काव्य रचना मन-प्राण को अनुप्राणित और अभिभूत नहीं कर पाते हैं। संगीत की कला इससे इतर नहीं है। असहाय दर्द में छलके आंसू ही संगीत हैं। दुर्भाग्यवश आज हम पीड़ा में मन की अनुभूति को महसूस करना भूल गए हैं। मौजूदा संगीत में शोर है, शमन नहीं है, कोलाहल है कलरव नहीं है। इसीलिए आज जीवन तो है, पर संगीत नहीं है। शांति और नीरवता नहीं है। आज संगीत और जीवन के इस महात्म्य को एक बार फिर से समझने की महती जरूरत है।

श्रीप्रकाश शर्मा

प्रदूषित नदियां और बाढ़ की तबाही

सुधीर कुमार

> भारत में नदियों का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक महत्व है, लेकिन प्रदूषण की वजह से कई नदियों का अस्तित्व खतरे में है

दक्षिणी-पश्चिमी मानसून में एकाएक आई तेजी की वजह से इन दिनों बिहार, असम, मेघालय, मिजोरम, त्रिपुरा समेत देश के कई राज्य भीषण बाढ़ की चपेट में हैं। सबसे बुरा असर प्रभावित इलाकों के ग्रामीण समाज तथा अर्थव्यवस्था पर पड़ा है। इस आपदा से भौतिक एवं मानव संसाधन का बड़े पैमाने पर नुकसान हुआ है। लाखों लोग बाढ़ में फंसकर अपने जीवन को बचाने की जद्दोजहद कर रहे हैं। बाढ़ देश में हर वर्ष तबाही लाती है। बाढ़ प्रभावित क्षेत्र का दृश्य कुछ पल के लिए मरघट-सा हो जाता है। एक तरफ लोगों के समक्ष सुरक्षित स्थानों पर जाकर अपने जीवन को बचाने की चुनौती होती है, वहीं इसके पश्चात प्रभावित आबादी के बीच भोजन, पेयजल एवं दवा जैसी मूलभूत सुविधाओं को प्राप्त करने की व्याकुलता बढ़ जाती है!

गौरतलब यह भी है कि देश के किसी भी हिस्से में जब भी बाढ़ आती है तो हमारे सामने नदियों की मंद पड़ी गति का प्रश्न खड़ा हो जाता है। दरअसल देश में बारहमासी नदियों के साथ-साथ बरसाती नदियां भी प्रदूषण की मानक रेखा से ऊपर बह रही हैं। गाद-मलबों की अधिकता होने के कारण नदियों की प्राकृतिक गति सुस्त पड़ गई है। ऐसे में हल्की बारिश होने पर भी नदियां जल संग्रहण नहीं कर पाती हैं और बाढ़ के फैलाव का सबसे बड़ा कारण बन जाती हैं। बेतहाशा औद्योगीकरण, कल-कारखाने से अनियंत्रित मात्रा में निकलते अशोधित अपशिष्ट तथा सीवरेज से निकलने वाली गंदगियों की वजह से देश के हर कोने में नदियां प्रदूषण के बोझ से दबी जा रही हैं, जिसकी वजह से नदियां अब सतत रूप से न तो प्रवाहित हो पा रही हैं और ना ही उनमें जल धारण करने की क्षमता ही शेष है।

ऐसे में साल के अधिकांश महीनों में नदियों में पानी की जगह रेत और गाद ही दिखाई पड़ें तो ज्यादा आश्चर्य नहीं करना चाहिए। आज भी देश के कुछ क्षेत्रों में नदी ही पेयजल का मुख्य स्रोत हैं, ऐसे में प्रदूषित और सूखती नदियां कब तक लोगों की प्यास बुझा पाएंगी, यह भी सोचने योग्य विषय है!

दरअसल मानव सभ्यताओं को जन्म देने वाली नदियां आज हर दृष्टि से उपेक्षा की शिकार हो गई हैं। उपेक्षित और प्रदूषित नदियां ही बाढ़ को आमंत्रण देती हैं। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की मानें तो देश में सैकड़ों नदियां अभी भी प्रदूषित हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से अरुणाचल तक देश के हर कोने में नदियां प्रदूषण के बोझ से दबी जा रही हैं। भारत में नदियों का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व है, लेकिन अतिक्रमण और प्रदूषण की वजह से कई नदियों का अस्तित्व खतरे में है। इधर नरेंद्र मोदी सरकार द्वारा राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना के तहत देश के 16 राज्यों की 34 नदियों में प्रदूषण कम करने के लिए 5800 करोड़ रुपये से अधिक की धनराशि मंजूर किए जाने से नदियों के पुनरोद्धार की आस जगी है, लेकिन बतौर नागरिक हमें ध्यान रखना होगा कि यह लक्ष्य सिर्फ नदियों को साफ करने से नहीं, उन्हें गंदा न होने देने के हमारे संकल्प से भी जुड़ा है!

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

अमेरिका की विश्वसनीयता पर उठते सवाल

संजय गुप्त ने अपने आलेख 'खतरों से खेलता अमेरिका' में जिस साफगोई से अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के झूठ को उजागर करते हुए उनकी विश्वसनीयता पर सवाल खड़े किए हैं, वह विचारणीय है। स्वयं को सर्वशक्तिमान मानने वाले अमेरिका का झूठा अहंकार तब सामने आया जब पाक प्रधानमंत्री इमरान खान की अमेरिका यात्रा के दौरान ट्रंप ने अपनी झोंक में यहां तक कह दिया कि अगर अमेरिका चाहे तो दस मिनट में अफगानिस्तान का पृथ्वी से निशान मिट सकता है। इस पर अफगानिस्तान ने अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए अमेरिका के प्रति आक्रोश व्यक्त किया था। ऐसे कई उदाहरण हैं जिसमें अमेरिका या तो झूठ बोल रहा है अथवा ऐसी अहंकारी भाषा बोल रहा है, जिसकी कोई जरूरत नहीं है। अमेरिका के इस झूठ का सबसे ताजा उदाहरण कश्मीर मुद्दे पर अमेरिकी मध्यस्थता का है, जिसको लेकर अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रंप ने सफेद झूठ बोलते हुए यह कह दिया कि जापान में आयोजित जी-20 शिखर सम्मेलन में भारत के प्रधानमंत्री मोदी ने कश्मीर समस्या के समाधान के लिए भारत-पाकिस्तान के बीच तीसरे पक्ष के रूप में अमेरिकी मध्यस्थता की बात की थी। जबकि हकीकत में प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिकी राष्ट्रपति से इस मुद्दे पर कोई चर्चा ही नहीं हुई थी। बावजूद इसके अमेरिका के इस झूठे दावे पर पाकिस्तान इतरा रहा है, लेकिन वैश्विक फलक पर अमेरिका की विश्वसनीयता को लेकर जो सवाल उठने लगे उससे परेशान अमेरिका को बैकफुट पर आकर यह कहना पड़ा कि द्विपक्षीय कश्मीर मसले पर अमेरिकी मध्यस्थता की कोई आवश्यकता नहीं है। इससे अमेरिका की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लगना स्वाभाविक है। ऐसे में भारत को अमेरिका के साथ अपने राजनयिक संबंध स्थापित करते समय पर्याप्त सावधानी बरतने की जरूरत है।

pandeyvp1960@gmail.com

कश्मीर के विकास में बाधक

रेडियो कार्यक्रम 'मन की बात' में प्रधानमंत्री ने साफ कह दिया है कि जो लोग कश्मीर के विकास की राह में रोड़ा बन रहे हैं और नफरत फैलाना चाहते हैं, उनके ये नापाक इरादे कामयाब होने वाले नहीं हैं। प्रधानमंत्री की ओर से ऐसे किसी बयान की आवश्यकता इसलिए थी, क्योंकि एक तो इन दिनों कश्मीर चर्चा के केंद्र में है और दूसरे, केंद्र सरकार से यह अपेक्षा बढ़ गई है कि घाटी को पटरी पर लाने के लिए हरसंभव उपाय करे, क्योंकि गृहमंत्री बनने के बाद से शाह कश्मीर पर खास ध्यान दे रहे हैं। सभी को भरोसा है कि मोदी-शाह की जोड़ी कश्मीर की समस्याओं को निपटा कर रहेगी। बीते दिनों कश्मीर में जवानों की 100 अतिरिक्त कंपनियां तैनात की गई हैं। जिसके साथ ही कश्मीर में राजनीति गरमा गई है, घटिया बयान सामने आने लगे हैं कि 35ए को हाथ लगाया तो सारा शरीर भस्म हो जाएगा। लेकिन केंद्र सरकार का कहना है कि ये कंपनियां सिर्फ कश्मीर की सुरक्षा के लिए तैनाती की गई हैं। एक तरफ केंद्र सरकार आतंकवाद पर नकेल कस रही है तो दूसरी तरफ घाटी के नेता उनकी वफादारी कर रहे हैं। इन सब के बीच मासूम कश्मीर की जनता पिस रही है। क्या उनको निडर होकर जीने का हक नहीं? क्योंकि ये आतंकी हमले उनको डर की जिंदगी जीने को मजबूर कर रहे हैं।

rjainoffical@gmail.com

व्यवस्था को दुरुस्त करने की जरूरत

भारतीय रेल यातायात का सबसे बड़ा साधन है। राज्य के यात्रियों को सस्ता और सुगम यात्रा कराने वाली ट्रेनों में लोग धूम्रपान करते हैं। क्या सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान करना अपराध नहीं है? सरकार द्वारा ऐसे सभी स्थानों पर वैधानिक चेतावनी लिखी होती है कि धूम्रपान दंडनीय अपराध है। बावजूद इसके कुछ पढ़े-लिखे अशिक्षित लोग ऐसे अपराध जानबूझकर करते हैं। वे अपने स्वास्थ्य के साथ-साथ आस-पास के लोगों का भी स्वास्थ्य बिगाड़ रहे हैं। दुख की बात है कि ऐसे लोग समझाने पर झगड़ने पर आमादा हो जाते हैं। इस व्यवस्था को ठीक से लागू करने का दायित्व सिर्फ सरकार का ही नहीं, अपितु हम सभी को अपने दायित्वों को निभाने की जरूरत है। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए हम अपने आस-पास के वातावरण को दूषित करके अपने साथ अन्य लोगों को भी मौत के मुंह में धकेल रहे हैं। कानून का सम्मान करते हुए सरकार के दिशा-निर्देशों का पालन करना चाहिए।

आचार्य राम कुमार बघेल शास्त्री, पलवल

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थ